B.A. III Paper - VI

डॉ० शरवर 07/11/2020

शास्त्रीय श्रुति की प्रामाणिकता से कम विश्वसनीय है अर्थात् परम्परागत धारणाओं की प्रामाणिकता विश्वसनीय है।

(3) दोनों तथाकथित रूप से विरोधी मान्यताओं या विश्वासों में कुछ अपेक्षित संशोधन करके उनके बीच सुसंगति और सामञ्जस्य स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। ज्ञानमीमांसा के अन्तर्गत इस प्रकार के प्रयास को प्रमुखता प्रदान की जाती है।

नीतिशास्त्र, समाजदर्शन और राजनीति दर्शन मुख्य रूप से मानवीय आचरणों, मानवीय क्रियाओं और गतिविधियों के अध्ययन से सम्बन्धित हैं, इस प्रकार हम इन्हें मानव-व्यवहार से सम्बन्धित शास्त्र मान सकते हैं। ये सभी शास्त्र इस समस्या से सम्बद्ध नहीं हैं कि हमारे कौन से विश्वास सत्य हैं या असत्य हैं अपितु इनका सम्बन्ध इस बात से है कि हमारे कौन से विश्वास या कौन सी मान्यतायें मनुष्य और समाज के लिए उचित हैं और शुभ हैं या लाभदायक हैं अर्थात् मनुष्य और समाज के प्रयोजन की सिद्धि करते हैं। परन्तु औचित्य और शुभता के कारण समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं, इसलिए नवीन धारणाओं और नूतन मान्यताओं की स्थापना हो जाने पर परम्परागत स्वीकृत मान्यतायें व विश्वास प्रश्नचिन्ह के घेरे में आ जाती हैं। विज्ञान और औद्योगिकी के क्षेत्र में हुयी उल्लेखनीय प्रगति के परिणामस्वरूप न केवल समाज के स्वरूप में परिवर्तन आया है अपितु समाज के नियमों में भी परिवर्तन आया है। उदाहरण के लिए मनोविज्ञान के क्षेत्र में हुयी अत्याधुनिक प्रगति और नूतन अनुसंधानों ने यह प्रदर्शित किया है कि कुछ व्यक्तियों द्वारा जो सामाजिक दृष्टि से अनैतिक या अवांछित व्यवहार किया जाता है उसका कारण मानसिक विकार है और हमें ऐसे कृत्यों को अपराध न मानकर मनोरोग मानना चाहिए तथा किसी मनोचिकित्सक से ऐसे व्यक्तियों का उपचार कराना चाहिये। अब इस प्रकार की नूतन मान्यताओं की स्थापना हो जाने से हम अपनी अपराध तथा दायित्व सम्बन्धी अवधारणा पर पुनर्विचार और इसकी पुनर्व्याख्या करने को विवश हो गये हैं। इसके परिणामस्वरूप नैतिक और अनैतिक आचरण, सामाजिक और असामाजिक व्यवहार सम्बन्धी पूर्व-स्वीकृत मान्यता और धारणा आज के परिवर्तित परिवेश में संशोधन की अपेक्षा रखती है। जब इस प्रकार की समस्या उठती है तो दार्शनिक यह सोचने को विवश हो जाता है कि कहाँ तक किन आधारों पर परम्परागत विचारों को स्वीकार किया जाय तथा किन आधारों पर नवीन विचारधाराओं का बौद्धिक औचित्य ढूंढ़ा जाय। इस प्रकार दो विभिन्न दृष्टिकोणों के बीच विसंगति और विरोधाभास की स्थिति आ जाती है और दार्शनिक का कार्य इन दो विरोधी मान्यताओं के विरोध का परिहार करना है तथा कभी-कभी इनमें अपेक्षित संशोधन करके दोनों विचारधाराओं के विरोध का परिमार्जन करके समन्वय स्थापित करना होता है।

किसी भी विश्वास या मान्यता के बौद्धिक दृष्टि से युक्तिपूर्ण होने के लिए आवश्यक है कि वह निम्न शर्तों या मानदण्डों को पूरा करे - (1) सुसंगति (Consistency) (परन्तु यह पर्याप्त नहीं है क्योंकि दो प्रकार के विश्वास आन्तरिक रूप से या स्वतः सुसंगत हो सकते हैं, परंन्तु परस्पर उनमें संगति का अभाव भी हो सकता है); (2) तथ्यों से सम्बन्धित विश्वासों से यह देखना होता है कि कौन सा तथ्य जगत के वास्तविक तथ्य के अनुकूल है। दार्शनिकों के लिए पहली शर्त का पूरा करना आसान है परन्तु दूसरी कसौटी का परीक्षण कठिन है। इसलिए अधिकांश दार्शनिकों का मत है कि यह निश्चित करना वैज्ञानिकों का कार्य है कि कौन सा हमारा विश्वास सत्य है, वास्तविक है अथवा असत्य है।

नीतिदर्शन, समाज दर्शन और राजनीतिशास्त्र, जो मानव व्यवहार और मानवीय क्रियाओं से सम्बद्ध हैं, के क्षेत्र में यह कठिनाई और बढ़ जाती है। यहाँ हमें यह देखना होता है कि क्या उचित है, क्या अनुचित है, क्या शुभ है और क्या अशुभ है। सामान्य जन की शब्दावली में या बौद्धिक दृष्टि से मूल्य तथ्यों से पूर्णतया भिन्न है अर्थात् मूल्यों को तथ्यों के रूप में परिभाषित नहीं किया जा सकता है। दो परस्पर विरोधी मूल्यों में से किसे तथ्य परक या वस्तुगत माना जाय, इसके विनिश्चय की कोई सर्वमान्य प्रणाली नहीं है। उदाहरण के लिए, आदर्श समाज व्यवस्था के मापदण्ड के बारे में परस्पर भिन्न-भिन्न और विरोधी विचारधारायें अभिव्यक्त की जा सकती हैं, जो एक दूसरे से असंगत भी हो सकती हैं। अब ऐसा कोई विज्ञान नहीं है जो हमें यह

बता सके कि इन दो विरोधी मान्यताओं में से किसे सत्य माना जाय और किसे असत्य। कुछ देश प्रजातांत्रिक प्रणाली अपनाते हैं जबकि अन्य कुछ देश साम्यवादी सिद्धान्त को मानते हैं, अब हम किस प्रकार बौद्धिक दृष्टि से इनमें से किसी एक के पक्ष या विपक्ष में तर्क दे सकते हैं।

इस सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि आलोचनात्मक मूल्यांकन के द्वारा निषेधात्मक रूप से कुछ विश्वासों को असत्य सिद्ध किया जा सकता है। यदि हम प्रत्यक्ष रूप से किसी विश्वास की सत्यता प्रमाणित करने में अक्षम हैं तो हम परोक्ष रूप से, अन्य संभावित विकल्पों के उन्मूलन के द्वारा इसका पक्ष पोषित कर सकते हैं। वस्तुतः कभी-कभी निषेधात्मक परीक्षण के द्वारा भी निर्णायक प्रमाण प्रस्तुत किये जा सकते हैं तथा विश्वासों की सुसंगतता प्रदर्शित की जा सकती है। राजनीतिक विचारधाराओं में व्याप्त विसंगतियों को प्रदर्शित करने तथा उन्हें अबौद्धिक प्रमाणित करके उनका परित्याग करने में निषेधात्मक परीक्षण को अपनाया जा सकता है।

प्रो० डी० डी० रैफेल ने यह दिखाया है कि परम्परागत राजनीति दर्शन के आलोचक इस तथ्य की उपेक्षा करते हैं कि तथ्य भी मूल्यात्मक-निर्णयों (Value-judgments) का पक्षपोषण करते हैं। यद्यपि इस प्रकार के निर्णयों की तथ्यों के साथ अनूकूलता को प्रत्यक्षतः प्रदर्शित नहीं किया जा सकता तथापि इनका परोक्ष परीक्षण किया जा सकता है। यद्यपि दार्शनिक इस स्थिति में नहीं होते कि तथ्यों का अन्वेषण कर सकें परन्तु विज्ञान तथा प्रेक्षण द्वारा स्थापित तथ्यों के आधार पर यह दिखा सकते हैं कि कोई राजनीतिक सिद्धान्त ऐसे तथ्यात्मक मान्यताओं पर आधारित हैं जो स्वयं असत्य हैं।

यदि समीक्षात्मक मूल्यांकन का विकास विश्वासों या मान्यताओं की भावात्मक स्थापना के स्थान पर निषेधात्मक खंडन पर आधारित होता है तो इसे दार्शनिक त्रुटि नहीं मानी जा सकती है। विज्ञान भी उपकल्पनाओं की सत्यता प्रमाणित करने की बजाय असत्य कल्पनाओं को अप्रमाणित करके ही आगे बढ़ता है। यहाँ यह कहने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि राजनीति दर्शन सदैव ही इसी प्रक्रिया को अपनाता है जो भिन्न प्रकार के राजनीतिक सिद्धान्तों या मान्यताओं का विरोध, कभी-कभी दोनों के बीच सन्तुलन, समन्वय या सामंजस्य स्थापित करके समाप्त करने का प्रयास किया जाता है। कभी-कभी ऐसे सिद्धान्तों के बीच तुलना करके विरोध का परिमार्जन कर दिया जाता है।

ऊपर यह उल्लिखित किया गया है कि दर्शन का एक अन्य कार्य संप्रत्ययों (अवधारणाओं) का स्पष्टीकरण करना है। कोई विश्वास या धारणा सत्य है, सुसंगतिपूर्ण है या युक्तिपूर्ण है अथवा विसंगतिपूर्ण है, असत्य है या अवास्तविक है, इसका विनिश्चय बिना यह समझे नहीं हो सकता है कि वह विश्वास क्या है और इसका निहितार्थ क्या है। उसमें प्रयुक्त शब्दों का अर्थ क्या है। इस प्रकार दर्शन का प्रमुख कार्य समाज प्रत्ययों या अवधारणाओं की व्याख्या से सम्बन्धित है। अवधारणाओं या संप्रत्ययों का परीक्षण उसमें प्रयुक्त शब्दों के प्रयोग को समझने के द्वारा ही किया जा सकता है। यहाँ सामान्य प्रत्ययों या अवधारणाओं से अभिप्राय ऐसे प्रत्ययों से है जो किसी विशेष व्यक्ति, स्थान या वस्तु से सम्बन्धित न होकर 'सामान्य' से सम्बन्धित होते हैं जैसे- मन, जड़ तत्व, देश-काल आदि। वस्तुतः दार्शनिक समस्याओं के अन्तर्गत इन्हीं प्रत्ययों का अध्ययन भी किया जाता है। समाज और राजदर्शन के अन्तर्गत विवेचित ऐसे सामान्य संप्रत्यय हैं— समाज, प्राधिकरण, सामाजिक वर्ग, न्याय, स्वतन्त्रता, प्रजातंत्र आदि। सामान्य प्रत्ययों के स्पष्टीकरण के क्रम में दर्शन निम्न तीन परस्पर सम्बद्ध उद्देश्यों से सम्भावित होता है- (I) विश्लेषण, (II) संश्लेषण, (III) संप्रत्ययों का विकास। संप्रत्ययों के विश्लेषण से तात्पर्य है, उसके घटकों या तत्वों का उल्लेख करना। मुख्य रूप से यह कार्य किसी संप्रत्यय की परिभाषा द्वारा पूरा किया जाता है, उदाहरणार्थ, संप्रभुता का विश्लेषण इसे सर्वोच्च वैधानिक प्राधिकरण के रूप में परिभाषित करके किया जा सकता है। संप्रत्ययों के संश्लेषण का तात्पर्य है, उसके विभिन्न तत्वों या घटकों के बीच के पारस्परिक तार्किक सम्बन्ध को प्रदर्शित करना। उदाहरण के लिए अधिकार और दायित्व की अवधारणा के बीच के तार्किक सम्बन्ध को इस तथ्य का उल्लेख करके प्रदर्शित किया जा सकता है कि जब 'A' का 'B' पर अधिकार है तो इसका अर्थ यह है कि B, A के प्रति दायित्व भावना से परिपूर्ण है। संप्रत्यय

के विकास या सुधार का अर्थ एक ऐसी परिभाषा के उल्लेख से है जो स्पष्टता या सुसंगति की स्थापना में सहायक हो, उदाहरण के लिए, यह कहा जा सकता है कि राज्य की संप्रभुता का प्रयोग केवल वैधानिक प्राधिकरण के रूप में किया जा सकता है न कि असंवैधानिक ढंग से बलपूर्वक शान्ति स्थापित करने के लिए। प्रो० रैफेल ने यह इंगित किया है कि इन तीनों कार्यों को साथ-साथ प्रयुक्त किया जा सकता है। समाजदर्शन और राजदर्शन में उपरोक्त तीनों ही उद्देश्यों को पूरा किया जाता है जिससे संप्रत्ययों का स्पष्टीकरण समुचित रीति से हो पाता है।

दर्शन और जीवन में सम्बन्ध
(Relationship between Philosophy and Life)

मानव एक विवेकशील प्राणी है जिसका स्वभाव है विचार करना। विचार का सम्बन्ध बुद्धि से तथा बुद्धि का सम्बन्ध ज्ञान से है। दर्शन शब्द का अंग्रेजी समानार्थक 'Philosophy' दो शब्दों से मिलकर बना है 'Philo' और 'sophia' जिसका अर्थ है, ज्ञान के प्रति प्रेम (Love of Wisdom)। इस प्रकार व्युत्पत्ति की दृष्टि से ही दर्शन का सम्बन्ध ज्ञान से है तथा मनुष्य का स्वभाव ही ज्ञान-प्राप्त करना है। परिणामस्वरूप 'ज्ञान' ऐसा तत्व है जो मनुष्य के जीवन तथा दर्शन के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। विश्व में मनुष्य ही एकमात्र ऐसा प्राणी है जिसमें बुद्धि, तर्क, विवेचन, विश्लेषण और निर्णय लेने की शक्ति है। दर्शनशास्त्र एक आलोचनात्मक, विश्लेषणात्मक गंभीर चिन्तन है जिसके अन्तर्गत मानव जीवन के विविध पक्षों का सम्यक् विवेचन और निष्पक्ष मूल्यांकन किया जाता है। चिन्तन करना मनुष्य का स्वभाव है और इसलिए वह स्वभावतः दार्शनिक चिन्तन करता है। दार्शनिक चिन्तन गूढ़ होते हुये भी वैज्ञानिक चिन्तन है। ज्ञान-प्राप्ति के प्रयास में तथा अपनी उत्सुकता और जिज्ञासा की शांति के लिए मनुष्य ऐसे प्रश्न उठाता है, जिसका उत्तर दर्शनशास्त्र के अतिरिक्त ज्ञान और विज्ञान की अन्य किसी भी शाखा में नहीं दिया जा सकता है। जैसे - ''मानव जीवन का क्या अर्थ है?'' 'मानवजीवन का परमलक्ष्य या अन्तिम उद्देश्य क्या है।' इस संसार का जिसमें मनुष्य रहता है, क्या महत्व है?' 'इस ब्रह्माण्ड का सामान्य स्वरूप क्या है, जिसमें मानव-जीवन अवस्थित है?' 'मनुष्य की परमगति क्या है?' 'मुक्ति का क्या उपाय है?' 'मनुष्य अपने प्रयासों से अपनी सीमा के अन्तर्गत किस मार्ग का चयन करें।' इसी प्रकार आत्मा, परमात्मा और धर्म तथा नैतिकता सम्बन्धी विविध प्रश्न उठाये जाते हैं, जिनका अटूट सम्बन्ध मानव जीवन से है। इन सभी समस्याओं, प्रश्नों व जिज्ञासाओं की समुचित व्याख्या करना ही दर्शन का प्रमुख लक्ष्य है। दर्शनशास्त्र मानव जीवन के विविध लक्ष्यों का आलोचनात्मक मूल्यांकन करता है तथा श्रेष्ठ लक्ष्यों का निर्धारण करता है। दर्शनशास्त्र भौतिक, आध्यात्मिक लक्ष्यों के बीच भेद स्थापित करता है तथा आध्यात्मिक लक्ष्यों की प्राप्ति का मार्ग भी खोजने का प्रयास करता है। दर्शन मानव जीवन के नैतिक और धार्मिक पक्षों से सम्बन्धित है तथा विविध मानदण्डों की स्थापना करके मानव के आचरणों का मूल्यांकन करता है। इसी प्रकार दर्शनशास्त्र मानव जीवन से सम्बन्धित विभिन्न धर्मों का अध्ययन करता है, उनकी तुलना करता है तथा सभी धर्मों के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयास करता है। दर्शनशास्त्र का सम्बन्ध मानव जीवन के सैद्धान्तिक, आदर्शात्मक और नैतिक पक्ष से ही नहीं है अपितु वह मानव जीवन के सामाजिक और राजनीतिक पक्षों से भी सम्बन्धित है। वह सामाजिक और राजनीतिक मूल्यों की स्थापना करता है, विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं के स्वरूप, उनके कार्यों आदि का भी आलोचनात्मक और विश्लेषणात्मक मूल्यांकन करता है। दर्शनशास्त्र आदर्श नैतिक मानव के निर्माण के लिए मानदण्ड की ही स्थापना नहीं करता है अपितु आदर्श समाज और आदर्श राज्य के मानदण्डों की स्थापना करता है। इस प्रकार दर्शनशास्त्र मानव जीवन के बौद्धिक, नैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक पक्षों के साथ सामाजिक और राजनीतिक पक्षों से भी घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। अतः ये सभी आरोप निराधार हैं कि दर्शन अव्यावहारिक, अमूर्त, काल्पनिक और अप्रासंगिक है। वस्तुतः दर्शनशास्त्र मानव जीवन के लिए उतना ही उपयोगी और प्रासंगिक है जितना कि अन्य शास्त्र।

दर्शन का सम्बन्ध मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन और सामूहिक जीवन दोनों से है। हेरोल्ड एच० टाइटस